मीराबाई वेदनानुभूति

डॉ. आर.पी. वर्मा,
असि. प्रो. एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग,
इन्दिरा गॉंधी राजकीय महिलामहाविधालय,
रायबरेली, उ.प्र

वेदना मन का एक भाव है, परन्तु भिन्न–भिन्न शास्त्रों में इसका प्रयाग भिन्न–भिन्न अर्थो में किया गया है। चिकित्सालय में किसी अंग–भंग आघात या रोग विशेष से आविर्भूत पीड़ा को ' वेदना' कहा जाता है। यह वेदना का भौतिक अथवा शारीरिक रूप से है। मनोविज्ञान के अनुसार 'सुख प्रतिकूल की संज्ञा' को वेदना माना गया है। यह वेदना का मानसिक अथवा सूक्ष्म रूप है। काव्यशास्त्र में वेदना का प्रयोग इन दोनों अर्थो से भिन्न होता है। काव्यशास्त्र में वर्णित वेदना वेदना में न तो चिकित्साशास्त्र की सी शारीरिक पीड़ा होती है और न मनोविज्ञान की सी सामान्य स्तरीय अनुभूति। काव्य का जन्म शुद्ध अनुभूति में होता है। अतः काव्य की वेदना शुद्ध अनुभूत्यात्मक होती है इसीलिए वेदना को काव्य की जननी कहा गया है।

आदिकाल से ही वेदना काव्य को स्पन्दन देती आई है, किन्तु युगानुरूप और व्यक्ति वैभिन्य के कारण इसके स्वरूप और तत्त्वों में परिवर्तन होता रहा है। प्राचीन ग्रन्थों में, जैसे–वेद, रामायण, महाभारण इत्यादि में, हिंसा, अन्याय, अत्याचार, उत्पीड़न आदि वेदना के प्रेरक तत्व हैं। कालिदास युग ने प्रधानतः अनुराग की आधारशिला पर वेदना का प्रतिष्ठापन किया है। बौद्ध ग्रन्थों में वेदना का आधार जीव की करुणा स्थिति और संसार की नश्वरता है, इसीलिए बौद्धों में वेदनानुभूति को 'महाकरुणा' कहा गया है। भक्तियुग में विलाप, अनुराग, प्रकृति में उदासी, लोक–पीड़ा, आत्मग्लानि, विरह तथा निर्वेद आदि वेदना के प्रेरक तत्त्व बने। आधुनिक काल में वेदना के प्रेरक तत्त्वों में पर्याप्त परिवर्तन हुआ है।

मीरां भक्तियुगत की महान कवयित्री और भक्त हैं, अतः भक्तियुग को प्रेरक तत्तें का – जिनका नामोल्लेख ऊपर किया गया है – इनकी वेदना को प्रेरित करने में काफी हाथ है। स्थूलतः इनकी वेदना के तीन मूल प्रेरक हैं –

1. पति तथा माता–पिता आदि की मृत्यु
2. परिजनों द्वारा भीषण यातनाएं
3. भक्ति–भावना

मीरां के जीवन–वृत्त से ज्ञात होता है कि इनका वैवाहिक जीवन सुखी नहीं रहा, वरन् विवाह के कुछ वर्ष पश्चात् ही कुंवर भोजराज का देहान्त हो गया था। यदि मीरां के जीवन से सम्बन्धित उन अनुश्रुतियों को छोड़ दिया जाये जो प्रायः प्रत्येक भक्त के जीवन से ग्रंथिक हो जाती हैं तो कहा जा सकता है कि मीरा का यह वैधव्य उस समय हुआ जब जीवन की सुनहली आशाएं और उमंगे अपनी पराकाष्ठा पर होती हैं। इस आकस्मिक विषमाघात से निस्संदेह ही मीरा के आशाभरे हृदय को कचोट लिया होगा। साथ ही मां बाप की मृत्यु ने भी मीरा को एक प्रकार से अनाथ ही बना दिया था। ये घटनाएं विलाप और निर्वेद प्रेरक तत्त्वों के अन्तर्गत समाहित की जा सकती है।

इन घटनाओं ने मीरा को संसार के प्रति अवश्य उदासीन बना दिया होगा बचपन के भक्ति संस्कार इस उदासीनता के साथ उबल पड़े।

फलतः मीरा ने लोक लाज तजकर अपने आराध्य के समक्ष घुंघरू बांधकर नाचना शुरू कर दिया, 'सन्तन ढ़िंग' बैठना आरम्भ कर दिया। जिसका परिणाम यह हुआ कि इनके परिजन अत्यन्त रूष्ट हो गये और तत्कालीन राणा ने इन्हें विविध प्रकार की यातनाएं देनी आरम्भ कर दीं। इन यातनाओं में दो विशेषरूप से उल्लेखनीय हैं– विष का प्याला और विषधर भेजना। मीरा ने अपने पदों में इनका उल्लेख किया है यथा–

"राणा विषरो प्याला भेज्या, पीय मगण हूया
मीरा री लग्यां होगा हो जो हूयाँ।।"

राणा भेज्या विषरो प्यालो, थें इमरित वर दीज्यो जी।
मीरा के प्रभु गिरधरनागर, मिल बिछुड़न मत कीज्यो जी।।

विषरो प्यालो राणा भेज्यां, आरोग्यां णा जांच्यां।
मीरा रे प्रभु गिरधरनागर, जनम जनम री सांचा।।
राणौ भेज्यां विषरो प्याला चरणामृत पी जाणा।
काला नाग पिटार्या भेज्या, सालगराम पिछाणा।।

इन सब घटनाओं का प्रभाव यह हुआ कि मीरा की वैराग्य भावना और भी अधिक प्रबल हो गई। ये अपने मार्ग में गिरिराज की भांति अटल और निश्चल बन गई। विष के प्याले को अमृत के समान स्वादसहित पी गई ओर विषधर को कुसुमों की माला जानकर हृदय पर धारण कर लिया। इस प्रकार मीरा की भक्ति भावना दृढ़तर से दृढ़तम होती गई। यों तो इनकी भक्ति भावना पर नाथ और सन्तमत का भी पर्याप्त प्रभाव है, किन्तु यदि इस भावना को किसी सम्प्रदाय विशेष की परिधियों में बांधना ही अनिवार्य बन जाये तो इसे वैष्णव भक्ति भावना के अन्तर्गत रक्खा जा सकता है।

वैष्णव भक्ति में वेदना को प्रधानता दी गई है, क्योंकि यही वेदना विरह की जननी होती है और विरह से ही आराध्य का सन्निध्य प्राप्त होता है। यही कारण है कि सूरदास के कृष्ण के मथुरा चले जाने पर ब्रज वनिताओं के घर और आंगन सब विरह भर देते हैं–

"बिरह भर्यौ घर आंगन कोने।
दिन–दिन बाढ़त जात सखी री, ज्यौं कुरूखेत के सोने
तब वह दुख दीन्हौ जब बांधे, ताहू कौ फल जानि।
निज कृत चूक समुझि मन ही मन, लेति परस्पर मानि।
हम अबला अति दीन हीन मति, तुम सबही विधि जोग।।
सूर बदन देखतहिं अहूठै, यह सरीर को रोग।।"

मीराँ के हृदय में भी वेदना की अमित धाराएँ तरगित हैं जो इनकी बिरहा मिव्यक्तियों में बड़े ही मार्मिक ढंग से फूट पड़ी है। अपने प्रियतम के प्रति पूर्ण समर्पण करके उसकी सेवा के लिए ये 'हाजिर नाजिर' खड़ी तो रहती है, पर साथ ही उन्हें उपालम्भ देने से भी नहीं चूकती –चूके भी कैसे? जिस हृदय को बिरह–बाण ने तड़पा दिया है,सुख्या तथा चैन से अपरिचित कर दिया है और जो खड़ी–खड़ी प्रियतम की प्रतीक्षा में सूखती है, वह उपालम्भ न दे तो और कौन दे–

'थें तो पलक उघाड़ो दीनानाथ,
मै। हाजिर नाजिर कबकी खड़ी।
साजनियां दुसमण हो बैठ्या सबने लगू कड़ी।
तुम बिन साजन कोई नहीं है, डिगी नाव समद अड़ी।।
दिन नहिं रेण नहिं निंदरा, सूँ खूँ खड़ी खड़ी।

बाण बिरह का लग्या हिये में, भूलू न एक घड़ी।।
पत्थर की तो अहिल्या जारी, बन के बीच पड़ी।
कहा बोझ मीरां में कहिये, सौ पर एक घड़ी।।

ऊपर बताया जा चुका है कि काव्य में वर्णित वेदना का स्वरूप चिकित्सा शास्त्र तथा मनोविज्ञान में वर्णित वेदना से भिन्न होता है, अर्थात् चिकित्साशास्त्र और मनोविज्ञान में वेदना के स्वरूप का निरूपण इसे 'दुःखात्मक' मानकर किया गया है, किन्तु काव्य में इसका स्वरूप दुःखात्मक न होकर सुखात्मक ही होता हे। काव्यशास्त्र में जो सुख–दुखात्मकता का विवाद रस के विषय में उठा था, इसके मूल में यही वेदनानुभूति हैं। इस विवाद का उपासहार भक्ति रसायन के इन शब्दों में माना जा सकता है –

'बोध्यनिष्ठा यथास्वं ते सुखदुखादिहेतवः ।
बोद्धृनिष्ठास्तु संर्वेपि सुखमात्रै कहेतवः।।

भक्त बोद्धा मासाजिक है, अतः उसके चित्त में रहने वाले समस्त भाव केवल सुख के ही कारण होते हैं। इसी आधार पर, भक्त की वेदनाभूति सुखात्मकता सिद्ध हो सकती है।

यहीं पर यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि मीरा की वेदनानुभूति बोध्यानिष्ठ है या बोद्धृनिष्ठ? दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि मीरां की वेदनानुभूति पार्थिव है अथवा अपार्थिव ? प्रो. रामेश्वर प्रसाद शुक्ल पार्थिव और अपार्थिव दोनों का समन्वय मानते हैं –

(मीरां की वेदना के पीछे एक कुचले हुए स्वपन की, एक प्रेम–दग्ध हृदय की विकलता है। उस वेदना में पार्थिव यथार्थता है। मीरा ने कृष्ण के लिए उसी वेदना का अनुभव किया हो। जो एक प्रेमिका अपने हाड़, मांस के प्रेमी के लिए करती है। स्पष्ट है, जब किसी अशरीरी अतीरिद्रय प्रियतम के लिए वह यातना भोगी जाएगी, वह विरह की आकृलता भोली आएगी, जो एक स्थूल पार्थिव प्रियतम के लिए अनुभव की जाती है, तब उसमें सजीव वास्तविकता जीती जागती यथार्थता के साथ–साथ कैसी भव्यता और दिव्यता होगी। मीरा में इसीलिए में 'मीराजी' और 'हकीकी' और अपार्थिव दोनों का मिलन मानता हूँ।)

शुक्लजी का मीरां की वेदनानुभूति को पार्थिव मानने का कारण यह है कि उसमें 'सजीव वास्तविकता जीती–जागती अथार्थता' के साथ 'भव्यता और दिव्यता' है। यह मान्यता उचित नहीं है, इसके तीन कारण है। पहला तो कि यह मीरा की भावना इतनी परिष्कुत और उदात्त है कि उसमें पार्थिवता का लेशमात्र भी नहीं है। दूसरा कारण यह है कि जब मन साधारणीकृत हो जाता है – इस लोक भूति से ऊपर उठ जाता है – तभी भावों में सजीवता, यथार्थता भव्यता और दिव्यता आती है। तीसरा कारण यह है कि पार्थिव वेदनानुभूति में दुःख का योग होता है : उसमें आशा के स्थान पर निराशा और उत्साह के स्थान पर अकर्मण्यता की ही प्रधानता होती है, किन्तु मीरा की वेदना में न तो निराशा के दर्शन होते हैं, और न अकर्मण्यता के।

भाव दो प्रकार के माने गये हैं – बोध्यानिष्ठ और बोद्घृनिष्ठ। वर्णनीय विषय में रहने वाले भा बोध्यनिष्ठ और बोद्धा सामाजिक में रहने वाले भाव बोद्धृनिष्ठ कहलाते हैं।

मीरां अपने प्रियतम से वियुक्त हो गई है, इसका इन्हें अतीव दुःख है। अब इनकी समभ में नहीं आता कि प्रियतम किस प्रकार मिल सकेगा, क्योंकि जब वह आया था, तब यह सो गई थीं। इसीलिए इन्हें विरहजन्य दुःख के कारण तनिक भी चैन नहीं मिलता –

'जाण्यां ण प्रभु मिलण बिघ क्या होय
आया म्हाँरे आगणां फिर गया मैं जाण्या श्रोय।।
जोवतांमण रैण बीता दिवस बीता जोय।
हरि पधारा आगणां गया मैं अभागण सोय।।

बिरह व्याकुल अनल अन्तर कलणां पड़ता होय।
दासी मीरां लाल गिरधर मिल णा बिछड़या कोय।।

यही वेदना भिन्न–भिन्न प्रकार के रूपों में फूट पड़ती है। मधुमास में जब कोलिकापंचम स्वर में कूक उठती है तो विरहिणी की वेदना सजग हो जाती है। प्रियतम से मिलने के लिये अनुनय–विनय भी तो आवश्यक है। मीरा भी कभी उनसे अनुनय विनय करती है तो कभी उपालम्भ देती है –

'गिरधर रीसाणा कौन गुण।
कछुक औगुण हम में काढ़ो, मैं भी कान सुणाँ।।
मैं तो वासी थारी जनम जनम की, थें साहब सुगणा।
मीराँ कहे प्रभु गिरधरनागर, थारोई नाम भणा।।

इस पद में अपन्यभाव और उपलम्भ दोनों ने मिलकर भावों को जो भव्यता, दिव्यता तथा यथार्थता प्रदान की है, वह मीरा जैसी सहृदया कवयित्रियों के सरल हृदय के ही उद्‌गार हो सकते हैं।

मीरां की वेदनानुभूमि में दिव्यता और यथार्थता तो है ही आशा का भी अपूर्व समन्वय है। यद्यपि प्रियतम के आने की अवधि को गिनते–गिनते इनकी उंगलियों की रेखा घिस जाती है। किन्तु फिर भी ये निराश नहीं होती। प्रियतम के आने के समाचार की कल्पना से ही इनका मन उमांगित हो उठता है और ज्योतिषी को ये लाख–लाख बधाईत्रयां देने लगती हैं –

'जोसीड़ा णे लाख बघाया आस्यां म्हारो स्याम।
म्हारे श्रणंद उमंग भर्‌यारी जीव लह्यँ सुखधाम।।
पांव सख्यां मिल पीव रिझावां, आणंद ठामू ठांस।
बिसरि जावां दुख निरखां पियारी सुफल मनोरथ काम।
मीरां रे सुख सागर स्वामी भवण पधार्‌यां स्याम।।

यद्यपि मीरा का अपने प्रियतम से कभी साक्षात्कार नहीं हुआ, मिलन नहीं हुआ, तथापि इनकी आशा इतनी बलवती है कि इसी के संबल पर वे मिलन की कल्पना करके वास्तविकता संयोग की अनुभूति कर लेती है और इसी अनुभूति के बल पर पर ये सावन के बादल को सुखद बना लेती है–

"सावण दे रह्या जोहा रे, घर आयो जी स्याम मोरा, रे।
उमड़ घुमड़ चहुं दिस से आया, गरजत है घनघोर रे।।
दादुर मोर पपीहा बोलै, कोयल कर रही सोरा, रे।
मीरां के प्रभु गिरधरनागर, ज्यो वारूं सोई थोरा, रे।।"

मीरां की वेदना में अथाह विश्वास समाहित है। चारों ओर प्रकृति का मादक वातावरण छाया हुआ है जो किसी भी विरहिणी के मन को कचोट सकने में समर्थ है, किन्तु वही वातावरण मीरां के समक्ष नत मस्तक हो जाता है–

"नंदनंद मणन भायां बादलां णभ छायां।
इत घन गरजां उत घन लरजां, चमका बिज्जु डरायां।।
दादुर मोर पपीहा बोलां, कोयल सबद सुणायां।
मीरां के प्रभु गिरधरनागर, चरण कंवल चित लायां।।"

आत्म–समर्पण की भावना मीरां की वेदनानुभूति की एक और विशेषता है। बिरह के काले बादल मीरां के जीवनाकाश पर मंडराते हैं, प्रियतम उसकी सुधि नहीं लेते, परिजन उसके प्राणों तक को लेने पर उतारू हो जाते हैं, किन्तु मीरां की

समर्पण भावना में कोई अन्तर नहीं आता। यह तो उसी देश को जाने के लिए प्रस्तुत है जिसमें इनका प्रियतम रहता है–

"चलां वाही देश प्रीतम, पावां चालां वाही देस।
कहो कसूमल साड़ी रंगावां, कहो तो भगवां भेस।।
कहो तो मोतियन मांग भरावां, कहो छिटकावां केस।
मीरां के प्रभु गिरधरनागर, सुणज्यो बिडद नरेस।।"

कितने ही आलोचक मीरां और महादेवी की वेदना की तुलना करके अनेक समानताओं तथा विषमताओं का दिग्दर्शन कराते हैं। दोनों के काव्यों की मूल प्रेरणा वेदना में थोड़ा सा साम्य होते हुए भी युगों को परिस्थितियों के कारण वेदना–भाव में अनेक अन्तर है। मीरां रूप की आराधिका है और महादेवी अरूप की। महादेवी में मीरां की सी आकुलता, तन्मयता, बेसुधि और अनावृत प्रेमाभिव्यंजना नहीं है। इन्हें तो चिर–विरह–वेदना ही एक–मात्र अवलम्बन है। यही दुखवाद इन्हें वैयक्तिक सुख–दुख से आगे बढ़ाकर लोकसेवा की ओर उन्मुख करता है। मीरां और महादेवी की वेदनाभूति में केवल प्रतीकात्मक शैली का ही अन्तर नहीं है, बल्कि जीवन–दर्शन एवं भावनाओं के रूप में भी अन्तर है मीरां का वेदनावाद भक्तिपरक विरहवाद है और महादेवी का सेवावाद।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि मीरां की वेदनानुभूति अत्यन्त उदात्त, परिष्कृत और भावमयी है। और रामेश्वर प्रसाद शुक्ल के शब्दों में –

"मीरां की वेदना में एक शोधक प्रभाव है। उसके गीतों को पढ़कर, सुनकर हम भीतर–भीतर एक आन्तरिक ठहराव – एक जीवन–स्थिरता और प्रवृत्ति का मांगलीकरण अनुभव करते हैं। प्रेम की यातना हृदय को और द्रष्टा और स्रष्टा दोनों बना देती है। श्रीमती ब्राउनिंग के शब्दों में –

We learn in suffering what we teach in songs.

वेदना शब्द के अनेक अर्थ हैं। चिकित्साशास्त्र में किसी अंग–भंग, आघात या रोग विशेष से उत्पन्न पीड़ा को वेदना कहा जाता है। मनोविज्ञान के अनुसार सुख के प्रतिकूल भाव को वेदना कहते हैं। काव्यशास्त्र में करुणापरक शुद्ध अनुभूति को वेदना कहा जाता है। इसका जन्म करुणा से होता है। इसे ही काव्य की जननी कहा गया है।

मीरां की वेदनाभूति हृदयपरक है। इनकी वेदना में तीन प्रेरक तत्व हैं – पति तथा माता–पिता आदि की मृत्यु, परिजनों द्वारा दी गई भीषण यातनाएं और भक्ति–भावना। मीरां की वेदना का स्वरूप शुद्ध हार्दिक है। जो हृदय लौकिक विषमताओं से चीखना सीखा, वही औदात्म भावना के कारण अलौकिकता का भाव लेकर गूंज उठा। अतः मीरां की वेदना को पार्थिव, शरीरी अथवा लौकिक मानना उचित नहीं है। इनकी वेदना दिव्य है जिसमें प्रियतम के प्रति अनन्य भाव तथा गहन आत्म–विश्वास निहित है। इनकी वेदना इतनी सजीव है कि यदि इन्हें करुणा अथवा वेदना की सजीव प्रतिमा माना जाय तो अनुचित न होगा। इस सजीवता में इनके नारी–हृदय की कोमलता एवं स्वाभाविकता का भी महत्वपूर्ण योगदान है।

संदर्भ

1. मीरा का जीवन – अरविंद सिंह तेजावत, पृ. 42
2. मीरा बाई और उनकी पदावली – प्रो. देशराज सिंह, पृ. 24
3. कृष्णभक्त मीरा और उनका काव्य – डॉ. आर.पी. वर्मा, पृ. 88
4. मीरा पदावली – सं. नीलोत्पल, पृ. 49
5. भक्ति कालीन संत साहित्य – प्रो. वीरेन्द्र नारायण यादव, पृ. 64

6. मीरा बाई – डॉ. सुधाकर अदीब, पृ. 49

Copyright © 2016 *Dr. R.P Verma*. This is an open access refereed article distributed under the Creative Common Attribution License which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.